नगरों की गलियों में भिखारी की भांति चक्कर लगाने पड़ेंगे । यह हमारे देश के लिये श्रेयस्कर नहीं है । यह इस देश की शान्ति और प्रतिष्ठा की दृष्टि से उचित नहीं है । स्वयं हमारे हित में और न्याय तथा औचित्य के नाम पर मैं सरकार से प्रार्थना करूंगा कि वह श्रीलंका के प्रति दृढ़ नीति अपनाये और उन की धमकियों अथवा प्रलोभनों से न डिगे ।

प्रधान मंत्री तथा वैदेशिक-कार्य एवं रक्षा मंत्री (श्री जवाहरलाल नेहरू) : सभापति महोदय, श्रीमान्, ...

(**उपाध्यक्ष महोदय** पीठासीन हुए)

... लगभग सभी सदस्यों ने जिस सहिष्णुता के साथ भाषण दिये हैं और अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में हमारी नीतियों की ओर निर्देश किया है उस के लिये मैं सदन का आभारी हूं । विशेष रूप से म विरोधी दल के आचार्य कृपलानी का उन की उदार वाणी के लिये कृतज्ञ हूं । और मैं यह भी कह दूं कि मैं बहुत अंश तक उन की आलोचनाओं को स्वीकार करता हूं । उन्हों ने हमारी सफलतायें ही नहीं अपितु असफलताओं का भी उल्लेख किया है । केवल इस के कि मैं इन्हें दूसरे शब्दों में कहूं मैं असफलतायें मानता हूं । असफलता का भी अन्तिम छोर होता है । मैं कहूंगा : 'सफलता का अभाव' ; क्योंकि हम सफलता के लिये प्रयत्नशील रहते हैं और हम सफलता प्राप्त करेंगे । मैं यह मानता हूं कि हमें कितने ही मामलों—काश्मीर, पाकिस्तान, दक्षिण अफ्रीका, श्रीलंका और गोआ के सम्बन्ध में सफलता नहीं मिली है । उन्हों ने एक दो अन्य विषयों की ओर भी निर्देश किया । उदाहरणार्थ, उन्हों ने कहा कि हम दक्षिण पूर्वी एशिया संधि संगठन के निर्माण को नहीं रोक सके । मेरा निवेदन है कि हम इस दिशा में असमर्थ रहने के लिये दोष के भागी नहीं बनाये जा सकते । हम इतना कर सकते हैं कि उस संगठन से संसर्ग न रखें । हम विश्व के राष्ट्रों की गति-विधियों का नियंत्रण नहीं कर सकते हैं ।

कुछ मामलों के सम्बन्ध में कहने के पश्चात्—जिन में अधिक समय नहीं लगेगा —मैं गोआ और विशेष रूप से 'राष्ट्रमंडल से सम्पर्क' के सम्बन्ध में और अन्त में अपनी नीति के विषय में कहूंगा जिस के अन्तर्गत यह सब प्रश्न आ जाते हैं और जिन पर सभा में पर्याप्त चर्चा हुई है । मैं सभा को स्मरण करा दूं कि जब हम एक व्यापक नीति बनाते हैं तो दूसरे छोटे छोटे विषय इस में आत्मसात् हो जाते हैं । माननीय सदस्य उस का एक भाग तो पसन्द करते हैं किन्तु दूसरे के प्रति अरुचि प्रकट करते हैं, किन्तु मैं चाहता हूं कि वे उन दोनों भागों के बीच की कड़ी,—तार्किक शृंखला को समझें, कि यदि हम एक स्थान पर नहीं सम्भलते हैं तो अन्यत्र इस का प्रभाव होता है ।

आचार्य कृपलानी ने इस तथ्य की ओर संकेत किया कि गोआ के सम्बन्ध में हमारी नीति कदाचित् ब्रिटेन द्वारा प्रकट किये गये विचारों से, राष्ट्रमंडल से अथवा किसी अन्य व्यक्ति के कथन से प्रभावित हुई है । प्रो० मुकर्जी ने भी यही बात कही यद्यपि उन्हों ने कठोर शब्दों का प्रयोग किया था । मैं राष्ट्र-मंडल प्रश्न पर अभी कुछ नहीं कह रहा हूं —बाद में इस पर कहूंगा—लेकिन मैं विश्वास के साथ यह कह सकता हूं कि हम वहां जो कुछ कर रहे हैं उस का ब्रिटेन अथवा किसी अन्य देश द्वारा व्यक्त किये गये विचारों से कोई सम्बन्ध नहीं है । उस का हम पर लेशमात्र भी प्रभाव नहीं पड़ा है । वस्तुतः इस का प्रभाव विपरीत हुआ है ; क्योंकि कोई भी देश अपनी नीति के औचित्य अथवा अनौचित्य के सम्बन्ध में किसी अन्य देश की सम्पत्ति पसन्द नहीं करता है । मैं यह भी कह दूं कि गोआ के सम्बन्ध में दूसरे देशों

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

ने जो कुछ कहा है वह जैसा कतिपय सदस्यों की कल्पना के अनुसार नहीं है । किसी भी देश के हम से कार्यवाही विशेष करने के लिये नहीं कहा । यह सही है कि उन्हों ने स्थिति के सम्बन्ध में अपनी चिन्ता प्रकट की और इसे शान्तिपूर्वक हल करने के लिये अपनी आशा अभिव्यक्त की है ।

मैं यह स्वीकार करता हूं कि जिस ढंग से उन्हों ने अपनी चिन्ता व्यक्त की है वह भी उचित दृष्टिकोण नहीं है । सभा जानती है कि हम ने अपने उत्तरों में उन्हें यह बात स्पष्ट कर दी थी । लेकिन मैं सभा को इस बात का आश्वासन दे दूं कि उक्त अभ्यावेदनों का हमारी गोआ सम्बन्धी नीति पर थोड़ा भी प्रभाव नहीं पड़ा है ।

यहां मैं यह भी कह दूं कि तीन या चार दिन पहले ड्यू (दीव) की सीमा पर जो घटना हुई है उस से स्वयं मुझे बड़ा दुःख हुआ है । वहां पर दीव की पुर्तगाल की सीमा में घुसने का प्रयत्न करते समय पुलिस को 'हलका लाठी चार्ज' करना पड़ा था । इस के लिये मैं पुलिस को दोषी नहीं बताता हूं क्योंकि उन स्वयंसेवकों द्वारा पत्थर फेंके जाने पर वह कठिन स्थिति में पड़ गई थी । मैं यह भी कह दूं कि भारत में तथाकथित 'सत्याग्रह' विचित्र रूप धारण कर लेता है । आजकल प्रत्येक कार्य 'सत्याग्रह' है भले ही वह हिंसात्मक, आक्रामक और सत्याग्रह की हमारी मनोभावना से कितना ही दूर क्यों न हो । पत्थर फेंके जाने पर पुलिस की स्थिति आपद्मय हो गई और उन्हों ने लाठी-चार्ज किया जिस के परिणामस्वरूप कुछ लोग घायल हो गये । इस बात को यदि भूला भी दिया जाये तो भी, मुझे इस घटना से दुःख हुआ क्योंकि पुलिस अथवा जनता का यह कर्तव्य नहीं है कि वह इस मामले में किसी प्रकार की हिंसात्मक कार्यवाही करे । मान लीजिये हम यह निर्णय करते हैं—जैसा हम ने निर्णय किया है—भारतीय राष्ट्रजनों का सामूहिक रूप से भारत स्थित पुर्तगाली बस्तियों में जाना उचित नहीं है ; हमें उन्हें निरुत्साहित करना चाहिये । यह नीति गलत है अथवा सही, किन्तु इस का कदापि यह अभिप्राय नहीं है कि हमें हिंसा में पड़ कर इस नीति को क्रियान्वित करना चाहिये । हम ने राज्य सरकारों और सम्बंधित पुलिस के समक्ष यह बात पूर्णतया स्पष्ट कर दी थी ।

मैं एक और बात का निर्देश करना चाहता हूं । मुझ से कहा गया है—उस समय मैं यहां नहीं था—कि एक माननीय सदस्य ने हमारे द्वारा पोप को मान्यता देने के कार्य में इस आधार पर आपत्ति की है कि एक धर्माचार्य को मान्यता देना गलत है । आगे चल कर उन्हों ने यह भी बताया कि पोप ने गोआ के मामले में हमारे लिये बहुत सी कठिनाइयां उत्पन्न कर दी हैं । ये दोनों वक्तव्य पूर्ण रूप से गलत हैं । हम पोप को धर्मगुरु की हैसियत से नहीं मानते हैं—धर्मगुरु तो वह हैं ही—हम ने उन्हें एक स्वतंत्र राज्य के लौकिक प्रधान के रूप में मान्यता दी है । यह सच है कि वह लौकिक प्रधान हैं । हम किसी धार्मिक प्रधान को मान्यता नहीं दे रहे हैं यद्यपि वह एक विशाल जाति के धर्म-गुरू हैं । फिर, यह कहना गलत है, और मैं इस का खंडन करता हूं कि पोप ने गोआ के सम्बन्ध में कोई कठिनाई उत्पन्न की है । वस्तुतः भारत में केथोलिक चर्च के उच्च पदासीन पादरियों ने—मैं प्रत्येक व्यक्ति के बारे में नहीं कह रहा हूं और न मैं ऐसा कर ही सकता हूं—भारत में केथोलिक चर्च के धार्मिक नेताओं ने—गोआ के भारत में विलय के पक्ष में सार्वजनिक रूप से अपनी सम्मति व्यक्त की है ।

सभा को याद होगा कि इस सम्बन्ध में पुर्तगाल के प्रधान मंत्री ने यह तर्क उपस्थित किया था कि गोआ ईसाइयों का और विशेष रूप से रोमन केथोलिकों का पुण्य स्थान है जहां पर फ्रांसिस ज़ेवियर के अवशेष हैं और यदि किसी भांति गोआ का भारत में विलय हो गया तो उन के अवशेष और यह स्थान अपवित्र हो जायेंगे; यह एक निरर्थक वक्तव्य है। यह इस तथ्य के प्रति पूर्ण अज्ञान प्रकट करता है कि भारत में पचास लाख रोमन केथोलिक रहते हैं और उन्हें यहां रहने, धार्मिक रीतियों को मानने तथा अन्य कार्यों में भाग लेने की पूरी स्वच्छन्दता है। वे किसी भी अन्य व्यक्ति की भांति यहां के नागरिक हैं। चूंकि सेंट ज़ेवियर का नामोल्लेख किया गया था, कदाचित सभा के अनेक सदस्यों को मालूम होगा कि बम्बई नगर में सेंट थामस विद्यमान माने जाते हैं और मेरे विचार में वहां सेंट थामस माउण्ट भी है।

कतिपय माननीय सदस्य : मद्रास में।

श्री जवाहरलाल नेहरू : मैं ने भूल से बम्बई कह दिया था, मेरा अभिप्राय मद्रास से ही था। आज तक किसी व्यक्ति ने शिकायत नहीं की है कि सेंट थामस के अवशेष को किसी प्रकार की क्षति पहुंचाई गई हो। अतः भारत के केथोलिक धर्मावलम्बियों ने अत्यन्त स्पष्ट रूप में बता दिया है और यह प्रदर्शित कर दिया है कि वे गैर राजनीतिक लोग हैं एवं शान्ति जीवन व्यतीत कर रहे हैं लेकिन इन गैरराजनीतिक लोगों ने भी स्पष्ट रूप में यह प्रदर्शित कर दिया है कि वे गोआ के भारत विलय के पक्ष में हैं।

दो दिन पहले मैं कुछ प्रमुख गोआवासियों और केथोलिक धर्मावलम्बियों से मिला। उन में से अधिकांश अपने आप को गोआ मक्ति परिषद् का सदस्य कहते हैं। मुझे उन से मिल कर प्रसन्नता हुई क्योंकि वह आये दिन राजनीतिक मामलों के सम्बन्ध में मिलने वाले व्यक्तियों से भिन्न प्रकार के व्यक्ति हैं। वे राजनीतिज्ञ नहीं थे, वे प्रोफेसर थे, व्यवसाय वाले तथा दूसरे व्यक्ति थे जिन का राजनीति से कोई सरोकार नहीं था। मेरा विश्वास है उन में से एक या दो व्यक्ति भूत काल में पोप एवं पुर्तगाल सरकार द्वारा सम्मानित किये जा चुके हैं। वे राजनैतिक कार्यकर्ता नहीं थे किन्तु गोआ का घटनाचक्र देख कर वे अपने सामान्य गैर-राजनीतिक दायरे से बाहर आ गये और उन्हों ने इस कार्य में योग देने की दृष्टि से एक परिषद् का निर्माण किया। यह एक महत्वपूर्ण बात है। यद्यपि वहां गोआ राष्ट्रीय कांग्रेस और दूसरे संगठन हैं जो अनेक वर्षों से गोआ की स्वतंत्रता के लिये कार्य कर रहे हैं, लेकिन यह घटना उन से भी अधिक महत्वपूर्ण है कि ये गम्भीर और विचारशील व्यक्ति जिन्हें राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं है, जमाने की पुकार सुन कर आगे आने को विवश हीं गये। इन में से अधिकांश व्यक्ति केथोलिक हैं और मेरे विचार में इस सभा के किसी सदस्य द्वारा यह कहना एकदम अनुचित है कि केथोलिक चर्च अथवा केथोलिक चर्च के प्रधान अथवा पोप इस आंदोलन में किसी प्रकार की बाधा उपस्थित कर रहे हैं अथवा पुर्तगाल सरकार के कार्य को बढ़ावा दे रहे हैं।

श्री कौट्टुकपल्ली (मीनाचिल) : एक केथोलिक के नाते मैं आप के प्रत्येक शब्द का अनुमोदन करता हूं।

श्री जवाहरलाल नेहरू : धन्यवाद। मैं एक या दो बातें और कहना चाहता हूं। श्री अशोक मेहता ने पूछा कि जापान को कोलम्बो सम्मेलन में आमंत्रित क्यों नहीं

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

किया गया । यह जापान नहीं नेपाल है—नेपाल को कोलम्बो सम्मेलन में आमंत्रित क्यों नहीं किया गया ? श्री अशोक मेहता को याद होना चाहिये कि न तो हम इस सम्मेलन के प्रवर्तक थे और न हम ने आमंत्रण ही जारी किय थे । श्रीलंका के प्रधान मंत्री ने आमंत्रित किया था और हम उन्हीं के आमंत्रण पर गये थे और उन्हों ने चार देशों को आमंत्रित करने का निर्णय किया जिन के बारे में आप जानते हैं । वह दूसरों को भी आमंत्रित कर सकते थे । फिर, श्री मेहता ने 'एशिया एशिया-वासियों के लिये' खतरे के सम्बन्ध में आचार्य नरेन्द्र देव से प्राप्त पत्र से उद्धरण दिये ।

मैं आचार्य नरेन्द्र देव के पत्र में व्यक्त किये गये विचारों से पूर्णतया सहमत हूं और यह चाहता हूं कि हमारी जनता इस प्रकार के व्यर्थ के झगड़ों में न पड़े । हम ने यह कहा था कि एशिया में किसी को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिये, चाहे वह यूरोप हो, अमरीका हो अथवा अन्य कोई देश हो तथा एशिया को अपनी बुद्धि तथा इच्छा के अनुसार विकसित होने को छोड़ दिया जाये । एशिया न केवल क्षेत्रफल में बड़ा है अपितु इस में अनेक प्रकार के लोग भी रहते हैं । इसलिये अन्य व्यक्ति भी इस के सम्बन्ध में चर्चा कर सकते हैं, परन्तु एशिया को कोई एक इकाई समझना अपने को धोखा देना है । किन्तु इस में कुछ बातें एक सी भी हैं जैसे कि एशिया का बड़ा भाग सौ, दो सौ वर्षों तक विदेशियों के अधीन रहा है, चाहे प्रत्यक्ष रूप से अथवा अप्रत्यक्ष रूप से । मुख्यतः यह यूरोप के अधीन ही रहा है । इस कारण विदेशी अधीनता के विरुद्ध कशमकश से सम्बन्धित विचारों में एकता है । जैसा कि मैं ने पहले कहा कि माननीय सदस्य या मैं या कोई भी भारतीय, एक बर्मी, इंडोनेशियाई या किसी एशियाई को तथा वे सब हम भारतीयों को जितनी भली प्रकार समझ सकते हैं उतनी अच्छी तरह संभव है एक यूरोपियन या अमरीकन हमें न समझ सके । इसलिये, हमारा एक जैसा अनुभव, एक जैसे दुःख तथा एक जैसा संघर्ष रहा है और तभी हम एक जैसा ही व्यवहार भी करते हैं । मैं इस में विश्वास नहीं करता हूं कि 'एशिया एशियाइयों के लिये', 'यूरोप यूरोप-वासियों के लिये' है, परन्तु साथ ही साथ यह भी चाहता हूं कि किसी देश अथवा देशों के गुट को दूसरे के कार्यों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिये । वर्तमान संसार में एकाकी रहना भी संभव नहीं है । हमें सब के साथ ही साथ चलना है चाहे आप साथ चलना पसन्द करें अथवा नहीं ।

हम को न चाहते हुए भी सभी कार्य साथ साथ करने पड़ते हैं । आजकल राष्ट्रीयता का विचार भी पुराना समझा जाता है । परन्तु यदि आप प्रान्तीयता, तथा साम्प्रदायिकता से इस की तुलना करने लगें तो यह पुराना नहीं है क्योंकि प्रांतीयता या साम्प्रदायिकता प्रति-क्रियावादी हैं तथा राष्ट्रीयता एक उज्ज्वल आदर्श है जिस के पीछे हमें चलना है । परन्तु आधुनिक जगत में राष्ट्रीयता भी संकीर्ण हो चुकी है यह सत्य है । अतः हमें राष्ट्रीय होने के साथ ही साथ अन्तर्राष्ट्रीय भी होना चाहिये जैसे कि हमारे देश में वर्तमान के साथ अतीत का भी प्रसंग रहता है । हम इस अत्यन्त परिवर्तनशील काल में से गुजर रहे हैं । परन्तु हमें कोई ऐसा कार्य नहीं करना चाहिये जिस से हमारे विकास में कोई रुकावट पड़े । परन्तु अन्तर्राष्ट्रीयता की तुलना में अत्यधिक राष्ट्रीयता भी ठीक नहीं । वर्तमान समय में राष्ट्रीयता महान शक्ति है क्यों कि यह लोगों को संगठित करती है और स्वतंत्रता के लिये प्रेरणा देती है । यह एक संकुचित विचार-

धारा भी हो सकती है । इस का हमें ध्यान रखना चाहिये । सभा को ज्ञात है कि राष्ट्रीयता का बड़ा अजीब इतिहास है, क्योंकि भूत-काल में जो स्वतंत्रता प्राप्ति का एक साधन थी आज उसी राष्ट्रीयता ने कई देशों की स्वतंत्रता छीन ली है । अतः यह एक दूसरे में गुथी हुई है और हमें इस का भी ध्यान रखना चाहिये कि अच्छी चीज़ों से भी कभी कभी हानि हो सकती है ।

मैं नहीं जानता कि कोई और छोटी-मोटी बात उत्तर देने के लिये रह गई है या नहीं । किसी ने कहा था, शायद, श्री अशोक मेहता ने कहा था कि जापान के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा गया । मैं इसे समझ नहीं सका कि जापान के सम्बन्ध में किस ने कैसे और कब कुछ नहीं कहा । हमारे जापान के साथ बड़े मित्रतापूर्ण सम्बन्ध हैं तथा भविष्य में भी हम इन्हें बनाये रखेंगे । यह सत्य है कि हमारी इस बड़ी राजनीति में जापान को कोई स्थान नहीं है । हमारी इस बड़ी राजनीति में एशिया के कुछ बड़े देश हैं तथा कुछ बाहर के हैं जो हमारे मित्र हैं तथा संयुक्त राष्ट्र संघ में तथा अन्य सब जगह हमारी सहायता करते हैं । परन्तु जो हमारे अधिकतम निकट हैं वे बर्मा तथा दक्षिण-पूर्वी एशिया क्षेत्र में इंडोनेशिया है । अरब देश भी हमारे समीप हैं तथा हमारे मित्र भी हैं, परन्तु वे अपनी निजी समस्याओं में इतने उलझे हुए हैं कि उन को उन से ही छुटकारा नहीं मिलता । बर्मा, इंडोनेशिया, तथा भारत के समान हित तथा बहुत से पहलुओं की समान पृष्ठभूमि होने के कारण ये तीनों एक दूसरे के इतने नज़दीक आ गये हैं । मैं इस बात का स्वागत करता हूं । हम श्रीलंका का भी स्वागत करते हैं, क्योंकि कोलम्बो सम्मेलन के पश्चात् से उस ने भी हमारे साथ मिल कर कार्य किया है । मैं इस सम्बन्ध में यह बता देना चाहता हूं कि जापान की नीति कुछ भिन्न है, किन्तु हमारे साथ उस का कोई संघर्ष नहीं है, क्योंकि हम दोनों का क्षेत्र अलग अलग है । मैं नहीं जानता कि भविष्य में जापान की नीति क्या होगी, क्योंकि जापान युद्ध तथा हार के कारण बड़े ही संकट में से गुज़रा है । वे महान् तथा परिश्रमी लोग हैं । उन्हों ने अपना पुनर्निर्माण कर लिया है । परन्तु जापान भविष्य में किस ओर जायेगा यह मैं नहीं कह सकता ।

बहुत से माननीय सदस्यों ने तिब्बत की ओर निर्देश किया है । मैं कुछ भी नहीं समझा कि सभा के माननीय सदस्य इस सम्बन्ध में हम से क्या आशा करते हैं । क्या हम ने कुछ नहीं किया है अथवा हम ने कोई ग़लत कार्य किया है ? मैं इस समय इस विषय पर कुछ नहीं कहना चाहता, परन्तु माननीय सदस्यों से प्रार्थना करता हूं कि यदि किसी को कोई सन्देह हो तो भारत, तिब्बत तथा चीन का पुरातन इतिहास देखें तथा अपना सन्देह दूर करने का प्रयत्न करें । अंग्रेज़ों के काल में तिब्बत के चीन तथा भारत से किस प्रकार के सम्बन्ध थे । हमारा कहां स्थान आता है । संसार में बहुत से कार्य ऐसे होते हैं जिन को हम नहीं चाहते । परन्तु हम मूर्ख के समान डंडा ले कर नहीं घूमते फिरते कि जिन कार्यों को हम नहीं चाहते उन के विरुद्ध लड़ें और अपनी कठिनाइयों को बढ़ावें ।

पिछले युद्ध के पश्चात् बहुत सी बड़ी बड़ी चीज़ें हो चुकी हैं । उन में से एक संयुक्त चीन का अभ्युदय भी है । कुछ क्षण के लिये आप यह भूल जाइये कि वे साम्यवादी या साम्यवादियों के समीप हैं । सत्य तो यह है कि २०वीं शताब्दी में चीन, संयुक्त, शक्तिशाली, महान् शक्ति बन चुका है । मैं यह इसलिये नहीं कह रहा हूं कि चीन एक महान् शक्ति है तो भारत को चीन के

[श्री जवाहरलाल नेहरु]

भयभीत होना चाहिये और उसे भी वही नीति अपनानी चाहिये जोकि चीन में प्रचलित है । भविष्य में तथा वर्तमान समय में भी संसार में दो बड़ी शक्तियां अमरीका तथा रूस हैं । अब चीन अपनी भावी शक्ति के साथ सामने आ रहा है । यह अभी अधिक विकसित नहीं हुआ है, क्योंकि चीन में भारत से कम ही उद्योगों का विकास हुआ है । रत में संचार, परिवहन, तथा इसी प्रकार बहुत सी महत्वपूर्ण वस्तुओं का विकास हुआ है तथा ये विकास चीन में भी होने आवश्यक हैं । निस्सन्देह चीन शीघ्र ही उन्नति करेगा । मैं न तो तुलना ही कर रहा हूं और न ही आलोचना कर रहा हूं परन्तु मैं यह बता देना चाहता हूं कि महान् शक्तिशाली यह देश और भी अधिक शक्तिशाली होगा । इन तीन महान् देशों अमरीका, रूस तथा चीन को छोड़ कर, यदि आप संसार की ओर दृष्टि उठायें, भविष्य की ओर देखें तो यदि युद्ध आदि न हुए तो भारत चौथा देश होगा ।

मैं केवल मृगतृष्णा नहीं दिखा रहा हूं, बल्कि केवल स्थिति का निरीक्षण कर के बता रहा हूं कि भारत अपने आर्थिक विकास, संगठन, जनता की योग्यता, भौगोलिक स्थिति तथा इसी प्रकार की अन्य बातों के कारण अब उन्नति करेगा । भारत तथा चीन जैसे देश विदेशियों का प्रभुत्व, तथा आन्तरिक मतभेद न रहने पर निश्चय ही शक्तिशाली हो जायेंगे, इन्हें कोई नहीं रोक सकता । ये योग्य हैं, शक्तिशाली हैं, परन्तु केवल आन्तरिक कलहों, तथा कुछ विदेशियों के प्रभुत्व के कारण ही ये कमजोर हैं । जैसे ही विदेशी प्रभुत्व भारत से हटा हम ने उन्नति की । हम इस से भी अधिक उन्नति कर सकते थे यह और बात है ।

सरकार तथा व्यक्तियों की कोई परवाह न करते हुए शक्ति ही कोई कार्य कर पाती है । यदि व्यक्तियों में शक्ति है तो वे उन्नति करते हैं यदि सरकार मूर्ख भी हो तो भी वे उन्नति करते हैं । आचार्य कृपलानी मुझ से पूर्णतया सहमत हैं । ऐतिहासिक तथा स्वयं कार्य कर रहे हैं । ये महान् देश सैंकड़ों वर्षों की गिरावट के पश्चात्, उठ रहे हैं यह आप को महसूस करना चाहिये । साम्यवाद तथा साम्यवाद के विरोध के फालतू झगड़ों में हमें नहीं पड़ना चाहिये । साम्यवाद भी महत्वपूर्ण शक्ति है चाहे आप उसे पसन्द करें अथवा नहीं । अतः संसार की स्थिति को समझने के लिये एक क्षण के लिये आप इसे भूल जाइये । परन्तु दुर्भाग्यवश, कुछ पश्चिमी देशों पर साम्यवाद तथा साम्यवाद के विरोध का ऐसा भूत सवार है कि वे शक्ति का तो अन्दाज़ा लगाते ही नहीं । हम साम्यवाद को पसन्द करें अथवा नहीं, परन्तु हमारे पर उस का भूत सवार नहीं है, क्योंकि हम अपनी भलाई तथा उन्नति के बारे में अधिक ध्यान देते हैं । और इसी कारण, कुछ देश हम से नाराज़ हैं कि जैसे वह देखते हैं वैसे हम नहीं देखते । हम समझते हैं कि वे केवल एक ही भाग देखते हैं इसी-लिये हम उन्हें विरोधी मालूम होते हैं । यही ऐतिहासिक शक्तियां हैं । इस में सन्देह नहीं है कि वे अपना कहीं न कहीं स्थान बना लेंगे ।

हमें यूरोप के इतिहास के फ्रांस की क्रान्ति के समय पर दृष्टि डालनी चाहिये । यूरोप पर इस की बड़ी भयानक प्रतिक्रिया हुई, क्योंकि यूरोप में उस समय राजा राज्य करते थे । उन्हों ने सोचा कि संसार का नाश होने वाला है । जब नैपोलियन सामने आया तो वह यूरोप की जनता को शैतान का अवतार मालूम हुआ । उस समय ऐसी ही भावनायें प्रचलित थीं । यदि उस काल की वर्तमान काल से तुलना की जाये तो कुछ वास्तविकता

दिखाई देने लगती है । ये भावनायें आती हैं परन्तु संसार अपने आप को उन के अनुसार ढाल लेता है । सैकड़ों वर्षों तक यूरोप तथा एशिया में ईसाई धर्म तथा इस्लाम के नाम पर लड़ाई होती रही । दुर्भाग्यवश, पुरातन काल में भारत में इस प्रकार के झगड़े नहीं थे । यूरोप में थे और ये सैकड़ों वर्षों में समाप्त हुए । समस्यायें ऐसे ही सुलझती हैं । किन्तु यह बात पक्की है कि इन लड़ाइयों में ईसाई धर्म की विजय नहीं हुई और न ही इस्लाम का वह स्वरूप रहा । इसलिये आप को इन सब चीजों को इन के वास्तविक रूप में देखना चाहिये और आजकल जो कुछ हो रहा है उस से उत्तेजित नहीं हो जाना चाहिये । मैं तो इन्हें साम्यवादियों या साम्यवाद के विरोधियों का धर्मयुद्ध समझता हूं ।

मेरी अपनी धारणा है—मैं भारत के सम्बन्ध में यह कह रहा हूं किन्तु हो सकता है कि यही बात अन्य देशों पर भी लागू हो कि हम केवल अपने ही सिद्धान्तों के द्वारा उन्नति कर सकते हैं । हम अन्य देशों की सेनाओं, आन्दोलनों तथा विचारों से, जो चीजें सीखते हैं उन से हमारा लाभ हो सकता है और निश्चित ही होगा भी, किन्तु हमारा मूलाधार भारतीय ही होना चाहिये । हमारा मूलाधार भारतीय होना बहुत आवश्यक है, किन्तु साथ ही यह भी आवश्यक है कि कहीं ऐसा न हो कि हम केवल मूलाधार ही लिये बैठे रहें और आगे कुछ न करें । ऐसा इसलिये होता है कि केवल मूल ही बनाने की धारणा रहती है और उसी का आगे चल कर विकास होता है । आज की दुनियां में, जैसा कि मैं कुछ समय पूर्व कह चुका हूं, बिल्कुल सच्चा संकुचित राष्ट्रवादी बनना भी कठिन है । ऐसी बहुत सी बातें होती हैं जिन का सम्बन्ध सारे संसार से होता है ।

कुछ सदस्य यह समझते हैं कि राष्ट्रमण्डल में हमारा रहना १९२९-३० में रावी के तट पर की गई प्रतिज्ञा के विरुद्ध है । मैं उन प्रतिज्ञाओं का आप को निर्देश कर यह बताना चाहूंगा कि आप देखिये कि हमारी हालत क्या है । मैं तो कहता हूं कि हम ने सौ प्रतिशत उन प्रतिज्ञाओं का पालन किया है । इस का राष्ट्रमण्डल से सम्पर्क बनाये रखने की वांछनीयता से कोई सम्बन्ध नहीं है । हम इस सम्पर्क को बनाये भी रख सकते हैं और नहीं भी । क्योंकि जब हम ने वहां राष्ट्रमण्डल से सम्बन्ध विच्छेद करने की बात कही थी, तो उस का कुछ निश्चित तात्पर्य था । ब्रिटेन के आधिपत्य अथवा शासन को समाप्त कर देने का एक निश्चित तात्पर्य था । यद्यपि वह आधिपत्य सैद्धान्तिक था और कभी भी कार्य रूप में परिणत नहीं किया गया किन्तु फिर भी वह था तो । हमें उस से मुक्ति प्राप्त करनी थी जैसा कि हम ने किया भी और आज हमारे यहां सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न गणराज्य है । अब हमारा देश राष्ट्रमण्डल का एक अधिराज्य नहीं है । आज संसार के अन्य सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न गणराज्यों की भांति ही हम भी स्वतंत्र हैं । जैसा कि सभा को विदित है राष्ट्रमण्डल से सम्बन्ध अथवा अन्य ऐसी किसी भी चीज का उल्लेख हमारे संविधान में नहीं किया गया है । यह तो केवल आपसी समझौता है ।

आचार्य कृपलानी ने कहा : एक सन्धि कर लीजिये । मैं उन से निवेदन करूंगा कि वह इस पर विचार करें कि क्या सन्धि इस व्यवस्था विशेष से अधिक अच्छी हो सकती है ? सन्धि से तो हम बाध्य हो जाते हैं और हर प्रकार के आश्वासन देने पड़ते हैं । आज हम घरेलू तथा अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में जो भी चाहें निर्विघ्न रूप से करने के लिये पूर्ण स्वतंत्र हैं । पिछले चार-पांच वर्षों का इतिहास इस बात का साक्षी है । सन्धि से तो हमें उस की शर्तों का प्रत्येक दशा में पालन करना

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

ही पड़ता है और ऐसा करने से हमारा दायरा संकुचित हो जायेगा । इस प्रश्न पर हमें भावना में बह कर नहीं वरन् उस नीति को ध्यान में रखते हुए विचार करना है कि जिस से देश का राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय दोनों दृष्टिकोणों से लाभ हो । हमारे किसी भी कार्य में राष्ट्रमण्डल के सम्बन्ध से किंचित मात्र भी बाधा नहीं पड़ती है । वास्तव में हम दक्षिण अफ्रीका के संघ से बिल्कुल अलग हैं । यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से हम उस से नहीं लड़ रहे, किन्तु हमारा उन से उतना ही संघर्ष है जितना कि आपस में युद्ध करने वाले दो देशों में होता है । दोनों में से किसी भी देश में एक दूसरे के प्रतिनिधि नहीं हैं । पाकिस्तान से भी हमारा मैत्री भाव नहीं है ।

मैं समझता हूं कि एक समय आयेगा जबकि पाकिस्तान से हमारे सम्बन्ध मित्रतापूर्ण हो जायेंगे, किन्तु उस का राष्ट्रमण्डल से कोई सम्बन्ध नहीं है । पड़ौसी तथा एक ही जड़ और शाखा के होने के नाते यह बड़ी दुःखद चीज़ है कि हम एक दूसरे से रुष्ट हो कर रहें । राष्ट्रमण्डल से सम्बन्ध का किसी भी देश के साथ हमारे सम्बन्धों पर तनिक भी प्रभाव नहीं पड़ा है । ये सम्बन्ध तो स्वतंत्र निजी सम्बन्ध हैं । इस विषय में, जहां तक किसी देश से अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का प्रश्न है, वह इंगलिस्तान है । कनाडा तथा कुछ और देश भी इसी श्रेणी में आ जाते हैं । अब हमें देखना यह है कि इन देशों के सम्बन्धों में राष्ट्रमण्डल के सम्बन्ध से कहां तक परिवर्तन अथवा हस्तक्षेप किया गया है । मैं निवेदन करूंगा कि न तो देश की अर्थव्यवस्था में ही और न वैदेशिक नीति के सम्बन्ध में ही इस सम्बन्ध का किंचित् मात्र भी प्रभाव पड़ा है, बल्कि निश्चय ही यह सम्बन्ध हमारे लिये तथा विश्व में शान्ति रखने के लिये उल्टा सहायक ही सिद्ध हुआ है । यदि ऐसा है तो वास्तव में यह एक बड़ी चीज़ है । आचार्य कृपलानी ने भी हमारी वैदेशिक नीति की अत्यधिक उदारता से प्रशंसा की है ।

बाबू रामनारायण सिंह (हज़ारीबाग़ पश्चिम) : आंशिक रूप में ।

श्री जवाहरलाल नेहरू : आंशिक रूप में, केवल कुछ अपवादों को छोड़ कर, जिन का उल्लेख उन्हों ने किया था । मैं इस बात का निर्णय उन पर तथा सभा पर छोड़ता हूं कि इसी वैदेशिक नीति का पालन करने में न केवल अन्य देशों ने हमारी प्रत्यक्ष सहायता ही की, वरन् परोक्ष अथवा मनोवैज्ञानिक रूप से केवल इस कारण सहायता की क्योंकि हमारा सम्बन्ध राष्ट्रमण्डल से था । आप यह कह सकते हैं कि हमारे राष्ट्रमण्डल में सम्मिलित होने से इंगलिस्तान का कुछ लाभ हुआ है । मैं इस से सहमत हूं कि वास्तव में यदि भौतिक रूप से नहीं तो सम्मान के रूप में लाभ अवश्य हुआ है । किन्तु मेरा तात्पर्य यह है कि वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में राष्ट्रमण्डल से इतना कमज़ोर सम्बन्ध होते हुए भी विश्व शान्ति के कार्य में सहायता मिली है । माननीय सदस्यों ने देखा होगा कि चीन के जनवादी गणराज्य तथा इंगलिस्तान के बीच पहले से अधिक मैत्री भाव स्थापित हो रहा है । व्यक्तिगत रूप से की गई वार्ता को बता सकना मेरे लिये कठिन होगा । मैं भारतीय, अंग्रेज़ों अथवा भारतीयों की बात नहीं करता, वरन् उन सभी लोगों ने जिन्हें राष्ट्रमण्डल से सम्बन्ध क़ायम रखने पर प्रारम्भ में आश्चर्य हुआ था, यह स्वीकार कर लिया है कि राष्ट्रमण्डल से सम्बन्ध स्थापित करने में हम ने बड़ी बुद्धिमानी का काम किया है, क्योंकि इस से अन्तर्राष्ट्रीय मामलों को

सुलझाने में सहायता मिली है तथा विश्व शान्ति स्थापित करने में हमें सहयोग मिला है। इस से लेशमात्र भी रुकावट हमारे मार्ग में नहीं आने पाई है।

श्री एच० एन० मुकर्जी ने हमारे प्रधान सेनापति के कैम्बरले भेजे जाने तथा इंग्लैंड से किये गये आर्थिक संविदाओं का जो उल्लेख किया था उस का राष्ट्रमण्डल से हमारे सम्बन्ध से कोई ताल्लुक नहीं है। हम अमरीका अथवा फ्रांस या राष्ट्रमण्डल के अन्य किसी भी देश से आर्थिक संविदा करने के लिये स्वतंत्र हैं और राष्ट्रमण्डल इस में कुछ नहीं कर सकता। भले ही आप आर्थिक संविदाओं को पसन्द न करें किन्तु इन्हें राष्ट्रमण्डल के साथ न जोड़ें, क्योंकि यह एक स्वतंत्र पहलू है। हमारे प्रधान सेनापति तथा कुछ और पदाधिकारी कैम्बरले गये हैं और वे वहां के सैनिक अभ्यासों में भाग लेते रहे हैं। ऐसा हम इसलिये कर रहे हैं कि जिस से हमारे देश की नौसेना की ब्रिटिश नौसेना से मिलने-जुलने का अवसर मिल सके। "दिल्ली" नामक जहाज अपने आप सैनिक अभ्यास नहीं कर सकता। और इसे क्रियाशील रखने के लिये कुछ अभ्यास की आवश्यकता है। हमें अंग्रेजी नौसेना से कोई विशेष लगाव नहीं, वरन् हमारे यहां के लोगों ने फ्रांस तथा कुछ अन्य देशों की नौसेना के साथ भी सैनिक अभ्यास किये हैं। सभा को भली भांति विदित है कि हमारी नौसेना बहुत कुछ ब्रिटिश ढंग की है और उन्हीं से हम ने शिक्षा पाई है। इस में आगे चल कर परिवर्तन हो सकता है, किन्तु अभी तो हमें उन्हीं से सहायता मिल सकती है और इसी-लिये हम ने प्रधान सेनापति तथा कुछ अन्य पदाधिकारियों को सैनिक अभ्यासों में भाग लेने के लिये भेजा है। यदि सोवियत यूनियन अथवा चीन से बुलावा आये, तो मैं इन लोगों को वहां भी भेजूंगा। हम ने अनेक देशों के लोगों के प्रतिनिधियों को जिन में सोवियत यूनियन तथा चीन भी सम्मिलित है, यहां के सैनिक अभ्यासों में भाग लेने के लिये आमंत्रित किया है। हम उन्हें कुछ सिखा नहीं सकते, क्योंकि हम अभी इतने कुशल नहीं हैं। हम तो इन देशों को समान स्तर का समझते हैं। यह सच है कि हमारा राष्ट्र-मण्डल से सम्बन्ध के कारण नहीं, वरन् ऐतिहासिक कारणों से अंग्रेजों से अधिक सम्बन्ध है। अतः हम को अन्य देशों की अपेक्षा अधिक सुविधायें मिल सकती हैं।

दूसरी बात राष्ट्रमण्डल से सम्बन्ध रखने के विषय में यह है कि अभी बहुत बड़ी संख्या में मलाया, फीजी तथा मारीशस आदि देशों में भारतीय रहते हैं। श्रीलंका का भी प्रश्न है। उन का भविष्य क्या होगा यह एक बड़ी समस्या बनती जा रही है। हम ने कहा है कि ये विदेशी भारतीय जिस देश में रहते हैं वे उस देश के लोगों से अलग हो कर नहीं रहेंगे। यह उन की इच्छा पर निर्भर करेगा कि वे उस देश के राष्ट्रजन बनना चाहते हैं अथवा भारतीय ही रहना चाहते हैं। यदि वे भारतीय ही बने रहते हैं, तो स्वभावतः वहां उन को वे सुविधायें नहीं मिल सकेंगी जो वहां के राष्ट्रजनों को मिलती हैं। उन को मतदान का भी अधिकार नहीं मिलेगा। यदि वे वहां के राष्ट्रजन बनना चाहेंगे तो उन से हमारा केवल सांस्कृतिक सम्बन्ध ही रह जायेगा, राजनीतिक नहीं।

हम अनेक बार कह चुके हैं कि हम यह नहीं चाहते हैं कि जो भारतीय अफ्रीका में रहते हैं वे अफ्रीका की जनता का शोषण करें। ऐसा होने पर हम अफ्रीकनों के विरुद्ध वहां के भारतीयों को किसी प्रकार का संरक्षण नहीं देंगे। मलाया तथा इसी प्रकार अन्य स्थानों में भी लाखों भारतीय रहते हैं। राष्ट्रमण्डल से सम्बन्ध के कारण इन्हें कुछ सुविधायें प्राप्त

[श्री जवाहर लाल नेहरू]

हैं। वह यह कि भारतीय नागरिक रहते हुए भी यदि वे चाहें तो उन देशों के नागरिक अधिकारों का उपभोग कर सकते हैं। राष्ट्र-मण्डल का शिथिल सा यह सम्बन्ध हमारे रास्ते में किसी प्रकार की रुकावट नहीं डालता है वरन् बहुत सी बातों में अनेक प्रकार से हमारी सहायता ही करता है। इसलिये हमें इस सम्बन्ध को बनाये रखना चाहिये।

माननीय सदस्य अक्सर हमारे ऊपर आरोप लगाते हैं कि आप सभी देशों की आलोचना करते हैं पर आप रूसी साम्राज्य-वाद की आलोचना नहीं करते हैं। परन्तु यदि माननीय सदस्य जो कुछ मैं लिखता हूं उसे पढ़ें या जो कुछ मैं कहता हूं उसे सुनें तो वे देखेंगे कि मैं ने शायद ही कभी किसी देश की आलोचना की हो चाहे वे पश्चिम के देश हों या पूर्व के। साम्राज्यवाद या उपनिवेशवाद के सम्बन्ध में मैं अवश्य कभी कभी कुछ कहता हूं। परन्तु मैं हमेशा यही प्रयत्न करता हूं कि किसी देश का नाम विशेष रूप से न आने पावे। इस का अर्थ यह नहीं है कि मैं कुछ बातें छिपाना चाहता हूं। मेरा विचार है कि वैसे ही उत्तेजना बहुत फैली हुई है भय तथा क्रोध इतना बढ़ा हुआ है कि किसी प्रश्न पर शान्तिपूर्वक विचार करना कठिन है। भूतकाल में सोवियत रूस में बहुत सी ऐसी घटनायें हुई हैं जिन से मुझे बहुत दुःख हुआ है। परन्तु मुझे सारे तथ्य नहीं मालूम हैं इसीलिये मैं कोई फैसला नहीं कर सकता हूं। कितनी ही घटनायें पश्चिमी राष्ट्रों में ऐसी हुई हैं जिन से मैं बहुत दुखी हुआ हूं। बहुत सी बातें आज अफ्रीका में ऐसी हो रही हैं जो अत्यन्त भयानक हैं फिर भी मैं अपने ऊपर नियंत्रण रखता हूं और इन घटनाओं की जो भी प्रतिक्रिया मुझ में होती है उस को सदा ही प्रकट नहीं करता रहता हूं।

गत वर्ष लन्दन में टेलीविज़न की एक मुलाक़ात में किसी ने मुझ से प्रश्न किया था कि क्या यह उचित है कि राष्ट्रमण्डल का एक सदस्य होते हुए भी मैं राष्ट्रमण्डल या राष्ट्रमंडल के देशों की आलोचना किया करता हूं। इस का उत्तर देते हुए मैं ने कहा था कि प्रधान मंत्री की हैसियत से मेरे ऊपर जो दायित्व है उस को मैं भली प्रकार समझता हूं और उसी के कारण मैं ने अपने ऊपर इतना कड़ा बन्धन लगा रखा है, अन्यथा मैं तो पहाड़ की चोटी पर चढ़ कर चिल्लाता फिरता। सदा कटु सत्य चिल्लाते रहने ही से कुछ नहीं होता है, इस प्रकार आप किसी को कोई बात समझा नहीं सकते, वरन् इस से और अधिक कटुता बढ़ती है।

श्रीलंका के साथ कई मास पूर्व जो हमारा तथाकथित समझौता हुआ था वह सफल नहीं हो सका। उस के सम्बन्ध में प्रश्न तो बहुत से हैं परन्तु मुख्य प्रश्न ऐसे बहुत से व्यक्तियों का है जो भारतीय उद्-भव के हैं परन्तु भारतीय राष्ट्रजन नहीं हैं और लंका में रहते हैं और ऐसे व्यक्तियों की संख्या बहुत अधिक है। इस प्रश्न से बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध रखने वाले एक माननीय सदस्य ने चीनियों की उस भारी संख्या के सम्बन्ध में कुछ कहा था जो दक्षिण पूर्वी एशिया तथा अन्य स्थानों में रहते हैं और उन का कहना बहुत ही प्रासंगिक था। इसी प्रकार भारतीय भी बहुत बड़ी संख्या में अन्य देशों में रहते हैं। चीन के प्रधान मंत्री से अन्य प्रश्नों के सम्बन्ध में चर्चा करते समय मैं ने उन का ध्यान इस की ओर भी दिलाया था और कहा था कि हम दोनों के देश इतने बड़े हैं कि हमारे देशों के निवासी अन्य देशों में फैल गये हैं और इस में कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि हमारे पड़ौसी छोटे देश इस के कारण चीन तथा भारत से थोड़ा भय

अनुभव करते हैं। इसलिये जहां तक हो सके हमें उन के डर को दूर करने का प्रयत्न करना चाहिये।

जहां तक श्रीलंका का सम्बन्ध है भाग्यवश या दुर्भाग्यवश यह सच है कि श्रीलंका अपेक्षाकृत एक छोटा सा द्वीप है और भारत के बहुत निकट है, इसलिये श्रीलंका को यह भय रहता है कि ऐसा न हो कि भारतवासी भारी संख्या में श्रीलंका में आ जायें और भारत श्रीलंका को हजम कर ले। परन्तु यह भय बिल्कुल व्यर्थ है, क्योंकि भारत में कोई भी इस प्रकार नहीं सोचता है। हम चाहते हैं एक स्वतन्त्र श्रीलंका। हम ऐसी श्रीलंका चाहते हैं जिस से हमारा मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध हो, जो किसी अन्य देश की अपेक्षा, सांस्कृतिक रूप से, ऐतिहासिक रूप से, भाषा की दृष्टि से तथा धार्मिक दृष्टि से हमारे सब से अधिक निकट हो।

फिर भी यह सच्चाई तो है ही कि एक प्रकार का भय बना हुआ है। इसलिये मैं इस सभा के सदस्यों से निवेदन करूंगा कि वे किसी समय भी ऐसी बातें न कहा करें जिस से उनका भय और भी अधिक बढ़े। आर्थिक प्रतिबन्ध आदि लगाने की बातचीत मैं नहीं पसन्द करता हूं; हालांकि श्रीलंका की कुछ घटनाओं से मुझे बहुत दुख हुआ है। इस का कारण यह है कि मैं चाहता हूं कि यह सभा तथा यह देश कुछ भविष्य की ओर देखे। हमारे देश के सामने बहुत बड़ा भविष्य है। इसलिये हमें भविष्य पर भी निगाह रखनी चाहिये केवल वर्तमान से ही उलझ कर नहीं रह जाना चाहिये। इसलिये श्रीलंका हो या पाकिस्तान हो या कोई और देश हो हमें ऐसे काम नहीं करने चाहियें जो भविष्य में हमारी प्रगति की राह में रोड़े बनें। इसलिये यदि एक बार श्रीलंका का उत्तर मैत्रीपूर्ण न भी हो तो भी हमें श्रीलंका के साथ मैत्री का ही व्यवहार करते रहना चाहिये।

परन्तु प्रश्न तो ऐसे लोगों की बहुत बड़ी संख्या का है जो कभी कभी राज्यहीन कहे जाते हैं। वे हमारे देश के राष्ट्रजन हैं नहीं और यदि श्रीलंका की सरकार उन को अपना राष्ट्रजन न बनावे तो संविधान की दृष्टि से उन की स्थिति ऐसी हो जायेगी कि वे किसी भी राज्य से सम्बद्ध नहीं होंगे और ये सब लोग श्रीलंका में रहते हैं।

पहले भी इस प्रकार के प्रश्न उठ चुके हैं। बीस-तीस साल पहले जब ये प्रश्न उठे थे तो उन का प्रसंग दूसरा था। सदस्यों को याद होगा कि जब हिटलर जर्मनी का चांस्लर बना था तो बहुत भारी संख्या में लोग जर्मनी छोड़ कर भागे थे। वे राज्यहीन हो गये थे क्योंकि कोई और राज्य उन को अपना नागरिक बनाने को तैयार नहीं था और हिटलर उन को जर्मनी में रखने की बजाय उन के रक्त का प्यासा था। इस विषय पर बहुत कुछ लिखा जा चुका है। परन्तु जो प्रश्न हमारे सामने है उस में और इस में बहुत अन्तर है, क्योंकि साधारणतया ऐसा कभी नहीं होता है कि कोई देश अपने यहां निवास करने वाले लोगों को सामूहिक रूप से देश से निकाल दे चाहे वे किसी अन्य देश के ही राष्ट्रजन क्यों न हों। अशिष्ट व्यवहार करने के कारण कुछ एक व्यक्तियों को तो निकाला जा सकता है।

जब श्रीलंका के प्रधान मंत्री अपने साथियों के साथ आयेंगे तो हम उन के साथ बहुत मैत्रीपूर्ण ढंग से बातचीत करेंगे और इस सम्बन्ध में जो हमारे विचार हैं वे उन के सामने रखेंगे।

मैं राष्ट्रमण्डल से सम्बन्ध में कह रहा था। आप देखेंगे कि बर्मा और इंडोनेशिया के साथ हमारे सम्बन्ध उस सम्बन्ध की अपेक्षा कहीं अधिक गहरे हैं जो हमारे और राष्ट्रमण्डल के देशों के बीच हैं। आप ने

[श्री जवाहर लाल]

देखा कि राष्ट्रमण्डल के सम्बन्ध से इस में किसी प्रकार की अड़चन नहीं पड़ी, वरन् राष्ट्रमण्डल से सम्बन्ध होने के कारण हम बहुत से कार्यों को और अधिक सुगमता से कर सकते हैं।

आज हमें दुनिया में बहुत ही कठिन परिस्थिति का सामना करना है। परन्तु मेरा मतलब यह नहीं है कि इस सभा को या किसी व्यक्ति को इस कठिनाई से घबड़ाने की आवश्यकता है क्योंकि जहां तक हमारा बस चलेगा हम इन कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करेंगे। निस्सन्देह आज हम बहुत बड़े संक्रमण काल से हो कर गुज़र रहे हैं। जहां तक मैं समझता हूं इस काल में हमारी सब से बड़ी समस्या विश्वयुद्ध को रोकना है; क्योंकि विश्वयुद्ध छिड़ने से प्रत्येक वस्तु का नाश हो जायेगा। इसलिये हमारी नीति तथा और भी बहुत से देशों की नीति यथा-सम्भव इस युद्ध को रोकने की है। मैं यह तो दावा नहीं करता कि हम दुनियां में बहुत कुछ परिवर्तन कर सकते हैं, किन्तु उस के लिये हमें यथाशक्ति प्रयत्न करना चाहिये और इस बीच में हम उस कटु विवाद को दूर करने का प्रयत्न कर रहे हैं जिस ने अब पुरानी कूटनीति का अर्थात् एक दूसरे की निन्दा करने और बुरा-भला कहने की कूटनीति का रूप धारण कर लिया है क्योंकि हमारे विचार में इस से कोई शांतिपूर्ण हल नहीं निकलेगा। हम ने शान्ति की बात-चीत को तो हमारे पड़ौसी बर्मा और इन्डोनेशिया ने भी वैसा ही किया और इस का स्वागत किया।

आज लोगों के दिल में डर बैठ गया है। इस डर से हमें कैसे छुटकारा मिले कि सोवियत संघ दूसरे देशों को दबा रहा है अथवा अन्य बड़े देश दूसरे देशों को दबा रहे हैं! संसार की स्थिति आज बड़ी विचित्र हो गई है। हरएक पक्ष दूसरे पक्ष पर यह आरोप लगाता है कि उस ने उस के चारों ओर घेरा डाल दिया है अथवा डाल रहा है। कुछ देश सोवियत संघ पर विनाशात्मक अथवा ध्वंसात्मक कार्यों का आरोप लगाते हैं। हो सकता है कि इस में कुछ सचाई हो। सोवियत संघ अमरीका पर यह आरोप लगाता है कि अमरीका ने सभी ओर अड्डे बना कर उस के चारों ओर घेरा डाल रखा है—और इस में कुछ तथ्य है भी। यदि आप मानचित्र देखें तो आप को ज्ञात हो जायेगा कि अन्धमहासागर, भूमध्यसागर, हिन्द महासागर तथा प्रशान्त महासागर में सोवियत संघ तथा चीन के चारों ओर लगभग २०० अड्डे बनाये हुए हैं, और उत्तरी ध्रुव में क्या स्थिति है इस के बारे में तो मैं ठीक रूप से नहीं जानता। इसलिये यह प्रत्यक्ष है कि हर देश एक दूसरे से डरा हुआ है कि मालूम नहीं कि इस की प्रतिक्रिया क्या होगी। प्रश्न यह है कि इस डर से कैसे मुक्ति मिले।

मेरा निवेदन यह है कि इन सन्धि अथवा समझौतों के द्वारा इस डर से छुट-कारा नहीं मिल सकता। किन्तु इस का यह मतलब नहीं है कि प्रत्येक राष्ट्र भाग्य में विश्वास करने लगे और अपने आप को तैयार करने के लिये कुछ भी न करे। किन्तु इतना निश्चित अवश्य है कि ये सन्धि और समझौते कोई सहायता नहीं कर सकते। प्रारम्भ में इन्हों ने कोई सहायता भले ही की हो, किन्तु अब स्थिति ऐसी आ गई है जबकि सहायता की अपेक्षा ये रुकावट ही अधिक डालते हैं। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि यदि इन बड़े राष्ट्रों में से कोई भी राष्ट्र एशिया, यूरोप, अफ्रीका अथवा कहीं भी कोई आक्रमण करता है तो यह विश्व युद्ध

का कारण होगा । सन्धि शान्ति क़ायम नहीं रखतीं, अपितु विश्व युद्ध के डर की भावना ही शान्ति का कारण है । निस्सन्देह यह सत्य है कि यदि किसी ओर से भी कोई भारी आक्रमण होता है तो विश्व युद्ध हो जायगा । इसलिये भारी आक्रमण का तो कोई मौक़ा है नहीं । अब स्थिति ऐसी है कि कोई भी मामूली सी बात विवाद या झगड़ा पैदा कर सकती है । हमें वातावरण में सुधार करना है । वातावरण को सुधारने में जेनेवा सम्मेलन ने सहायता की है । दक्षिण-पूर्वी एशिया सन्धि संगठन ने कुछ अंशों में वातावरण को बिगाड़ दिया है । यह बुरी बात है, इस से उन के रक्षा-बल में कोई वृद्धि नहीं होती, जो वस्तुस्थिति थी वह तो थी ही, यह तो केवल दूसरे पक्ष को डराने की बात है । यह कोई शिष्ट बात नहीं है, यह व्यवहार्य नहीं है क्योंकि दूसरा पक्ष भी काफ़ी शक्तिशाली है, एक पक्ष को दूसरे पक्ष को डराना नहीं चाहिये । इसलिये समष्टि के हित को दृष्टि में रख कर हम ने ऐसा सोचा है ।

साम्यवाद तथा साम्यवाद के विरोध के बारे में चर्चा की जाती है । एक भारतीय तथा एशीयन के नाते मेरे लिए यह आश्चर्य का ही नहीं अपितु दुःख का भी विषय है कि किसी भी देश की जातीय भेद-भाव की नीति अमरीका तथा यूरोप वालों को उत्तेजित नहीं करती । दक्षिण अमरीका की जातीय भेद-भाव की नीति किसी भी रूप में हिटलर की नीति से भिन्न नहीं है । अंतर केवल इतना ही है कि उन्हों ने अति नहीं की है । किन्तु सिद्धान्त वही है—चाहे उस को लागू करने की विधि दूसरी क्यों न हो । हो सकता है कि वे कोमलता से काम लेते हों । हमने उसको सहन किया । हमने उसका ऊपरी दृष्टि से अध्ययन किया जो वास्तविक मुक्त भोगियों के दृष्टिकोण से बिल्कुल ही भिन्न है । इसी प्रकार विभिन्न स्थानों का दृष्टिकोण भी विभिन्न ही होता है । दिल्ली में बैठकर विश्व का अध्ययन करने पर हमारा दृष्टिकोण कुछ और हो सकता है जब कि मास्को या वाशिंगटन से अध्ययन करने वाले व्यक्ति का कुछ दूसरा ही दृष्टिकोण हो सकता है । अफ्रीका में जातीय भेद-भाव बहुत बढ़ रहा है और चूंकि सयुंक्त राष्ट्रसंघ इसके बारे में कुछ करने में असमर्थ है अतः वह संकल्प पारित कर देता है, किन्तु हमारे लिए यह बात बहुत ही महत्वपूर्ण है और कम से कम उतनी महत्वपूर्ण तो है ही जितनी कि साम्यवाद या साम्यवाद के विरोध का प्रश्न अमरीका और यूरोप वालों के लिए है ।

आचार्य कृपालानी ने भारतीयों को गोआ जाने की आज्ञा न देने पर आपत्ति की है । हो सकता है कि वे ठीक हों । यदि मैं मान लूं कि सिद्धान्त के आधार पर यह ठीक है कि प्रत्येक भारतीय को वहां जाने का अधिकार है, किन्तु फिर भी प्रत्येक अधिकार का उचित रूप में तथा उचित समय पर प्रयोग करना चाहिए । मैं प्रत्येक के दिल से यह भ्रम निकाल देना चाहता हूं कि किसी ग़ैर-गोआवासी भारतीय को गोआ में जाने की आज्ञा नहीं है । हो सकता है कि ऐसी बात कभी रही हो । मैं इस बात से सहमत हूं कि किसी दूसरे देश के निवासी को भी गोआ में जाने का अधिकार हो सकता है । किन्तु स्थिति विशेष अथवा घटनाओं को दृष्टि में रखकर उन अधिकारों के बारे में विचार करना होगा । हो सकता है कि इन अधिकारों का उपयोग करने से उन्हें उनके देश की तथा अन्य दूसरों को कठिनाइयों का सामना करना पड़े । इस दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर गोआ के सम्बन्ध में १५ अगस्त के आस-पास हमने विचार किया था । कुछ उन व्यक्तियों के प्रोत्साहन के फलस्वरूप, जो हमारी नीति को पसंद नहीं करते, काफी प्रचार हो रहा था कि गोआ निवासी पुर्तगाल शासन को चाहते हैं,

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

वे शासन में कोई और परिवर्तन नहीं चाहते, वे पूर्णतया सन्तुष्ट और प्रसन्न हैं, गोआ में पूर्ण शांति है, किन्तु भारतीय काफ़ी संख्या में यहां आ रहे हैं और गोआ निवासियों को मजबूर कर रहे हैं, उन पर दबाव डाल रहे हैं कि वे भारतीय साम्राज्य में सम्मिलित हो जायें । यह सभी जानते हैं कि इस प्रकार का प्रचार बिल्कुल प्रलापमात्र है । किन्तु बाहर बहुत से व्यक्तियों ने इस पर विश्वास किया था । हमें उस प्रचार का सामना करना है, हमें उस स्थिति का मुकाबला करना है, और यह दिखाना है कि वस्तुस्थिति क्या थी । वास्तविक बात तो यह थी कि स्वयं गोआ वाले स्वतन्त्रता, एवं भारत से सम्बन्ध स्थापित करना चाहते थे । यदि उस समय हमने बहुत से भारतीयों को वहां जाने की आज्ञा दे दी होती तो, इस तथ्य के होते हुए भी कि गोआ वाले स्वतन्त्रता चाहते हैं और इसके लिए बलिदान करने के लिए भी तत्पर हैं तो भी इसमें कोई संदेह की बात नहीं है कि कभी भी पुर्तगाल शासन से बाहर नहीं आ सकते जैसे कि वे अब बाहर निकलने का प्रयत्न कर रहे हैं ।

उन दिनों जब हम स्वतन्त्रता की लड़ाई में लगे थे तो उस समय की भारतीय रियासतों के सम्बन्ध में हमने एक विशेष रवैया अपनाया था । हमने उनके स्वतन्त्रता आंदोलन में कोई रुकावट नहीं डाली, किन्तु हमने बाहरी व्यक्तियों को बाहर से कोई भी कार्य उनके हित में करने वालों को प्रोत्साहन नहीं किया । इसका क्या कारण था । इसलिए नहीं कि एक भारतीय तथा रियासत में रहने वाले भारतीय में कोई अंतर था बल्कि इससे यह चाहते थे कि वहां की जनता स्वयं जाग्रत हो, अपने आप को संगठित करे और खाली दूसरों पर भरोसा न करे । चाहे वह सत्याग्रह हो अथवा कोई अन्य चीज़, बाहरी लोग जाकर मदद कर सकते हैं, किन्तु एक सत्याग्रह जिसकी अपनी कोई नींव या अपना कोई बल न हो, और जो केवल बाहरी बल पर ठहरा हो वह सत्याग्रह प्रबल हथियार नहीं होता बाहरी व्यक्ति मदद कर सकते हैं किन्तु उन लोगों में भी तो अपनी शक्ति होनी चाहिए । मैं तो केवल यही बता रहा हूं कि भारतीय रियासतों के सम्बन्ध में हमने जो नीति अपनाई थी इसने उन भारतीयों को बल दिया । व्यक्तिगत रूप से उन राज्यों से हमारा सम्बन्ध था, अखिल भारतीय रियासती प्रजा परिषद् के अध्यक्ष तथा अन्य रूप में भी मैं उनके सम्पर्क में आया । किन्तु कांग्रेसी सदस्यों तथा अन्य बाहरी व्यक्तियों को रियासतों में जाने तथा उन रियासतों पर आक्रमण करने के लिये हमने प्रोत्साहन नहीं दिया । इसलिये यह एक उच्च सिद्धान्त का ही प्रश्न नहीं है अपितु एक आन्दोलन को संगठित करने एवं अनुशासन में रखने का भी प्रश्न है और समय आने पर उचित रूप से चोट की जाय । यह समझने में कोई भूल नहीं होनी चाहिये कि गोआ को हम भारत का एक अंग मानते हैं, और यह भी स्पष्ट है कि किसी भी तरह से चाहे कितना भी दबाव क्यों न डाला जाये या कुछ भी क्यों न हो हम इस अधिकार को नहीं छोड़ेंगे तथा इसको प्राप्त करने के लिए कोई कमी बाकी नहीं रखेंगे । इसलिए आचार्य कृपालानी का यह कहना कि हमने गोआ निवासियों को आपत्ति में छोड़ दिया है, ठीक नहीं है । जहां तक कि सरकार का सम्बन्ध है वह स्पष्ट रूप से तथा बिल्कुल इस पक्ष में है कि गोआ का विलय भारत में हो । हमारे सार्वजनिक संगठनों ने भी इसमें सहयोग दिया है और हमने भी आर्थिक तथा अन्य मामलों में कार्यवाही की है । किन्तु विरोधी पक्ष के क्रान्तिकारी आन्दोलनों के नेता यह मानेंगे कि एक चीज़ वह होती

है जिसे केवल साहसिकता कहते हैं और जो साहस के कार्य या साहस दिखाने से भिन्न होती है। और चूंकि साहसिकता प्रतिक्रियावादी होती है इसलिए किसी भी उत्तरदायी दल या वर्ग को उसमें भाग नहीं लेना चाहिए। यह सफल नहीं होती। इससे प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है और नैतिक पतन होता है। सत्याग्रह की सफलता और इस के गुण जो पुरानी पीढ़ियों के हम में से कतिपय व्यक्तियों को सिखाया गया था, मुख्यतया इस के अनुशासन में है, और जब हम ने इस का बुरा मनाया तो हमें पीछे खींच लिया गया और इसी कारण हम किसी समय भी असफल नहीं हुए। सफलता में कुछ विलम्ब अवश्य हो गया होगा, परन्तु हमें कभी भी व्यर्थ जोखिम उठाने नहीं दिया गया।

माननीय सदस्य श्री चटर्जी ने, मेरी अनुपस्थिति में, अन्य बातों के साथ-साथ मुझे "सह-यात्री" बताया है। मैं ने न केवल बहुत से देशों की यात्रा की है अपितु अनेक विचार क्षेत्रों में सब प्रकार के व्यक्तियों का सहयात्री बनने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ है, जिन में से संभवतः बहुत से व्यक्तियों को श्री चटर्जी आदरणीय व्यक्ति भी न समझते हों। स्वयं अपने विषय में इस प्रकार कुछ कहना मुझे अच्छा नहीं लगता और न मैं ऐसा करना ही चाहता हूं परन्तु मेरा विश्वास है कि कुछ चीजें अच्छी हैं और कुछ चीजें बुरी हैं। निस्सन्देह, इन के बीच में से बहुत सी चीजें चुनी जा सकती हैं। मेरा दृढ़ और पूर्ण विश्वास है कि बुरे कामों के बुरे ही परिणाम होते हैं और अच्छे उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये भी बुरे मार्गों को कभी अपनाया नहीं जाना चाहिये। यदि आप मुझे बतायें कि मैं सदा उतना अच्छा काम नहीं करता, तो आप का कहना ठीक हो सकता है, क्योंकि हम कमजोर व्यक्ति हैं जिन्हें दिन प्रति दिन पेचीदा और कठिन स्थितियों का सामना करना पड़ता है। परन्तु तो भी मेरा दृढ़ विश्वास है कि साधन महत्वपूर्ण होते हैं और बुरे साधनों के सदा बुरे परिणाम होते हैं।

मेरा यह भी विश्वास है कि घृणा और हिंसा बुरे हैं—स्वभावतः और सर्वथा बुरे हैं—और मुख्यतया संसार में इस घृणा और हिंसा की भावना के आधिक्य के कारण ही हम इतनी भीषण स्थिति में पड़े हुए हैं। आज अणु बम और उद्जन बम हिंसा के प्रतीक हैं। मैं नहीं समझता कि एक देश या दूसरे देश की आलोचना करने से मुझे कोई लाभ होगा, क्योंकि यह घृणा और हिंसा में पड़ना है, या यह साधनों को कोई परवा नहीं करता। यदि आप मेरे साथ आर्थिक नीति की चर्चा करें, तो मैं आप से सहमत हो सकता हूं या आप मेरे से थोड़े असहमत हो सकते हैं। मैं पूर्णतया खुले दिल के साथ साम्यवादी या मार्क्सवादी या अन्य किसी आर्थिक नीति पर विचार करना बुरा नहीं समझता। इस का कोई महत्व नहीं कि मैं इस से सहमत हूं या नहीं, केवल, जैसाकि मैं ने कहा, इन का उद्भव भारत की भूमि में अवश्य होना चाहिये; इन का भारत की अवस्था और आदर्शों से सम्बन्ध अवश्य होन चाहिये। यदि आप उन को सन्दिग्ध उपायों और सन्दिग्ध पद्धतियों के साथ मिलाते हैं, तो मैं इसे पसन्द नहीं करता। मुख्यतया इसी कारण न केवल हाल में, बल्कि पहले भी, मुझे चाहे भारत में या अन्य कहीं होने वाली बातें अच्छी नहीं लगीं।

प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यता के अनुसार भरसक कार्य करने का प्रयत्न करता है, परन्तु यह अनुभव करते हुए कि लक्ष्य कदा-

प्रस्ताव

[श्री जवाहरलाल नेहरू]

चित् ही प्राप्त होता है, तो भी प्रत्येक व्यक्ति अपनी ओर से भरसक प्रयत्न करता है ।

उपाध्यक्ष महोदय द्वारा संशोधन संख्या ४, ७, १३ और १९ मतदान के लिये रखे गये और अस्वीकृत हुए ।

उपाध्यक्ष महोदय : प्रश्न यह है :

कि मूल प्रस्ताव के स्थान पर निम्नलिखित रखा जाये, अर्थात् :

"This House having considered the international situation and the policy of the Government of India in relation thereto approves of the foreign policy of Government which has not only enhanced India's prestige abroad, but has also promoted the cause of world peace by easing tension among nations and by propagating, *inter alia*, the idea of peaceful co-existence and of respect for each other's territorial integrity."

"यह सभा, अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति और उस के सम्बन्ध में भारत सरकार की नीति पर विचार करने के बाद, सरकार की वैदेशिक नीति का अनुमोदन करती है, जिस ने न केवल विदेशों में भारत की प्रतिष्ठा ही बढ़ाई है अपितु राष्ट्रों में तनाव कम कर के और साथ ही शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के तथा एक दूसरे की प्रादेशिक अखंडता के लिये आदर के भाव का प्रचार कर के विश्व शान्ति के उद्देश्य को प्रोत्साहन दिया है ।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ ।

उपाध्यक्ष महोदय : अन्य सभी संशोधन प्रतिषिद्ध हैं ।

मोटरगाड़ी उद्योग

सरदार हुक्म सिंह (कपूरथला-भटिंडा) : उपाध्यक्ष महोदय, मेरे पास "अमेरिकन ट्रकिंग" नाम की एक पुस्तिका है जिस से यह बहुत अच्छी तरह जाना जा सकता है कि मोटर गाड़ी उद्योग किसी देश की अर्थ-व्यवस्था में कितना महत्वपूर्ण होता है और उद्योग के अन्य क्षेत्रों पर उस का क्या प्रभाव पड़ता है । इस में केवल माल परिवहन के लिये मोटर गाड़ियों के सम्बन्ध में बताया गया है । अमेरिका में ८० लाख मोटर-गाड़ियां हैं और इन से ५० लाख से ऊपर कर्मचारियों को काम मिलता है और १ अरब १६ करोड़ १० लाख डालर प्रतिवर्ष विशेष सड़क करों के रूप में दिया जाता है । इस उद्योग में कितना लोहा, टिन की चद्दरें, इस्पात और अन्य चीजें काम आती हैं वह इस पुस्तिका में दिया हुआ है ।

हमारे देश में भी इस उद्योग के महत्व को योजना-आयोग ने समझा है और उस ने देश में मोटर गाड़ियों के निर्माण पर बहुत जोर दिया है । अधिकतर हम आयात पर निर्भर रहते हैं । हमारे यहां मोटर गाड़ियों के पुर्जे जोड़ने वाली लगभग ११ समवाय हैं । मोटर गाड़ियों के निर्माण के लिये जब उन से योजना प्रस्ताव मांगे गये, तो पांच समवायों ने अपने निजी कार्यक्रम प्रस्तुत किये, किन्तु छः समवायों से कोई कार्यक्रम इसलिये देना स्वीकार नहीं किया, क्योंकि देश में मोटर गाड़ियों की मांग बहुत कम है और वे निर्माण कार्य न चला सकेंगे ।

जैसा कि मैं ने अभी बताया, योजना-आयोग ने इस स्थिति को समझा है और यह